|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 15: पुरुषोत्तमयोग

1/2 (श्लोक 1-5), शनिवार, 21 जून 2025

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/7UltUsNGMto

वैराग्य से श्रीभगवान् की प्राप्ति

गुरु वन्दना एवम् दीप प्रज्वलन के साथ आज के अध्याय का प्रारम्भ हुआ। श्रीभगवान् की अतिशय मङ्गलमय कृपा से हमारा ऐसा भाग्य जागृत हुआ है कि हम लोग अपने इस मानव जीवन को सफल करने के लिए, सार्थक करने के लिए, अपने इहलोक को एवं परलोक को उत्तम बनाने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता को सीखने में व उसके सूत्रों को समझकर जीवन में लाने के लिए हम प्रवृत्त हो गए हैं।

पता नहीं, कोई हमारे इस जन्म के पुण्य कर्म हैं या फिर किसी जन्म में, किसी महापुरुष की कृपा दृष्टि हम पर पड़ गई है, जो हम श्रीमद्भगवद्गीता को पढ़ने के लिए चुन लिए गए हैं। हमने गीताजी को नहीं चुना है, गीताजी ने स्वयं हमें चुना है। जिन पर साक्षात् श्रीभगवान् की कृपा नहीं है वे चाह कर भी श्रीमद्भगवद्गीता से नहीं जुड़ पाते।

श्रीमद्भगवद्गीता में सात सौ श्लोक हैं, यह मानों गागर में सागर भर दिया है। हमारे महाराजजी सोलह वर्ष की आयु से भगवद्गीता पर प्रवचन कर रहे हैं। पिचहत्तर वर्ष की आयु में वे कहते हैं कि गीताजी में नई बात पता चली है कि जब से गीताजी का प्रारम्भ हुआ है तब से आदि शङ्कराचार्य जी से लेकर देश के बड़े-बड़े महापुरुषों ने गीताजी को पढ़ा है और कई प्रकार से अलग-अलग बातों की खोज की है। यह एक अद्भुत ग्रन्थ है। वे कहते हैं, भगवान् विष्णु की नासिका से निकलने वाली श्वास से वेद उत्पन्न हुए हैं। भगवान श्रीकृष्ण के मुख से गीताजी का प्रादुर्भाव हुआ है। उन्होंने अर्जुन से यह भी कहा कि अभी तो मैंने कह दिया है, परन्तु दोबारा मत पूछना।

महाभारत युद्ध के बाद अर्जुन श्रीकृष्ण के साथ-साथ चल रहे थे, तब अर्जुन कहते हैं कि हे केशव, उस समय तो युद्ध की बड़ी चिन्ता थी। आपने मुझे जो ज्ञान दिया वह मुझे कुछ कुछ याद है परन्तु सब कुछ याद नहीं है। अब मैं थोड़ा शान्ति में हूँ, फिर से श्रीमद्भगवद्गीता सुना दीजिए। श्रीभगवान् बोले, अब सम्भव नहीं है।

अर्जुन बोले, ऐसा कुछ भी नहीं, जो आपके लिए सम्भव न हो। मैंने आपके विश्व रूप के दर्शन किए हैं। सारे ऋषि और देव-सम्प्रदाय आपके आगे हाथ जोड़कर दर्शन कर रहे थे। आपके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।

श्रीभगवान् कहते हैं- मैं उस समय अलग भाव में था और उस समय जो मेरे मुख से निकल गया, वह पूर्ण मानव जाति के लिए कहा गया था, अब वह सम्भव नहीं है। अर्जुन ने उनकी बहुत स्तुति की परन्तु श्रीभगवान् ने दोबारा नहीं कहा।

वेदव्यासजी ने ऐसी कृपा की, कि अर्जुन से कहे गए सात सौ श्लोकों के ज्ञान को महाभारत में जाकर हमें फिर से दिया, जिसे आज हम सब श्रीमद्भगवद्गीता के रूप में पढ़ पाते हैं। अन्य किसी भी विधि से इसको पाना सम्भव नहीं है, वेदव्यास जी की कृपा से हमें यह लाभ मिल रहा है। जो श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन करता है, उसके जीवन में और जीवन के बाद भी उद्धार होता है।

श्रीमद्भगवद्गीता में किसी विशेष उपासना पद्धति की बात नहीं है। किसी मार्ग का खण्डन भी नहीं किया है। कहीं पर भी तिलक लगाने वाले, कीर्तन करने वाले को श्रीभगवान् ने भक्त नहीं कहा।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी॥

श्रीभगवान् कहते हैं, जो किसी से द्वेष नहीं करता, जो सबका मित्र है, जो सबके प्रति करुणा रखता है और दुःख-सुख, मान-अपमान में समान है। तुम नाम जप करते हो, गीता पढ़ते हो, उसके बाद तुम्हारे मन में बदलाव क्या है? यदि नहीं तो कितने भी नाम सङ्कीर्तन कर लो, कभी भक्त नहीं कहलाओगे। मैं तो तुम्हें तब भक्त कहूँगा जब तुम अपने आचरण में बदलाव लाओगे। श्रीभगवान् ने भक्त के कुछ लक्षण बताए हैं-

दूसरे अध्याय में श्रीभगवान् ने स्थितप्रज्ञ के लक्षण,
बारहवें अध्याय में भक्त के,
तेरहवें अध्याय में ज्ञानी के,
चौदहवें अध्याय में गुणातीत के,
पन्द्रहवें अध्याय में ज्ञानयोग और
सोलहवें अध्याय में दैव और आसुरी गुणों के बारे में बताया है।

बारहवाँ और पन्द्रहवाँ सबसे छोटा अध्याय हैं इसलिए सबसे पहले पढ़ाया जाता है। पन्द्रहवें अध्याय का महत्त्व बहुत अधिक है कि कभी एक ही अध्याय का पाठ करना हो तो पन्द्रहवें अध्याय के पाठ करने की परम्परा सबसे अधिक है। श्रीभगवान् ने स्वयं पन्द्रहवें अध्याय को **शास्त्र** कहा है। उन्होंने इस अध्याय में स्वयं को पुरुषोत्तम कहा है।

"मैं पुरुषोत्तम हूँ,"

ऐसा परिचय दिया इसलिए इस अध्याय का नाम **पुरुषोत्तमयोग** है।

15.1

श्रीभगवानुवाच
ऊर्ध्वमूलमधः(श्) शाखम्, अश्वत्थं(म्) प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि, यस्तं(वँ) वेद स वेदवित्॥15.1॥

श्रीभगवान् बोले – ऊपर की ओर मूल वाले (तथा) नीचे की ओर शाखा वाले (जिस) संसार रूप अश्वत्थ वृक्ष को (प्रवाह रूप से) अव्यय कहते हैं (और) वेद जिसके पत्ते हैं, उस संसार-वृक्ष को जो जानता है, वह सम्पूर्ण वेदों को जानने वाला है।

विवेचन- सामान्य रूप से इस श्लोक का अर्थ समझना बहुत मुश्किल है। आदि पुरुष परमेश्वर मूल वाले, ब्रह्मरूप मुख्य शाखा वाले संसार रूपी पीपल के वृक्ष को अविनाशी कहते हैं तथा वेद जिसके पत्ते कह गए हैं।उस संसार रूपी वृक्ष को जो पुरुष मूल सहित तत्त्व से जानता है, वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है।

श्रीभगवान् कहते हैं, कल्पना करो कि एक उल्टा पीपल का पेड़ है, क्योंकि इसकी जड़ें ऊपर की ओर है और शाखाएँ नीचे की ओर हैं। हमने तो ऐसा पेड़ देखा है जिसकी जड़ें नीचे की ओर होती हैं।

सामान्य रूप से **उर्ध्व** का अर्थ ऊपर होता है और **अध:** का अर्थ नीचे होता है। आदि शङ्कराचार्य भगवान् ने कहा, जो **श्रेष्ठ है वह उर्ध्व** है। ऊपर-नीचे का तात्पर्य केवल दिशात्मक ऊपर नीचे नहीं होता।

ऊपर की ओर उठने (गुणों) की वजह श्रेष्ठता है। जैसे एक बच्चा यदि दूसरी कक्षा से तीसरी कक्षा में गया तो वह ऊपर की ओर उठा है। इसका अर्थ यहाँ यह नहीं है कि पहले उसकी कक्षा चौथी मञ्जिल पर लगती थी अब तीसरी मञ्जिल पर लग सकती है।

एक बार स्वामी रामतीर्थ अमेरिका जा रहे थे। किसी ने कहा कि एक राजा भी इसी जहाज पर जा रहे हैं। स्वामी जी ने कहा कि मेरा टिकट कैंसिल करवा दो, एक जहाज पर दो राजा नहीं जा सकते। सबको बहुत आश्चर्य हुआ। स्वामी जी ने उस जहाज पर जाने से मना कर दिया। शिष्य भी धीरे-धीरे वापस चले गये। स्वामी जी के पास टिकट भी नहीं थी और जहाँ जाना था उसका पता भी सामान के साथ चला गया। उनके पास खाने-पीने का भी कोई सामान नहीं था। वे अकेले चौदह दिन तक वहीं बैठे रहे।

कप्तान को पता चला तो उसने उनसे पूछा कि क्या आपको कोई लेने आने वाला है? उन्होंने कहा, हाँ। क्या आप मुझे अपने घर नहीं लेकर चलोगे? वे उन्हें लेकर अपने घर गए और उनके लिए शाकाहारी भोजन बनवाया। तब वहाँ कप्तान का बेटा आया और उसने कहा कि मुझे आपसे गणित के कुछ सवाल पूछने हैं। उसने पूछा कि सरल रेखा की परिभाषा क्या है? कप्तान को पता था कि रामतीर्थ बहुत बड़े गणितज्ञ हैं। स्वामी रामतीर्थ कहते हैं कि क्या मैं तुम्हें वह उत्तर दूँ जिससे तुम परीक्षा में पास हो जाओगे या वह उत्तर दूँ जो सही है?

कप्तान ने कहा कि इसका क्या मतलब है? सही है वह अलग है और जो परीक्षा में आएगा वह अलग है? स्वामीजी बोले, बिन्दुओं को मिला दो तो रेखा बनती है। वह सरल रेखा है परन्तु वह सही नहीं है वह अधूरा है।
कप्तान बोला, कैसे? स्वामीजी ने कहा, पृथ्वी गोल है, इस कारण रेखा जैसे-जैसे बढ़ाते जाएँगे वह पृथ्वी की आकृति की तरह गोल होती जाएगी। अतः बहुत बहस हुई। अमेरिका के सभी गणितज्ञ आकर बैठ गए।

तब रामतीर्थ जी ने सिद्ध किया कि यूनिवर्स का अस्तित्व शून्य है। (एवरीथिंग इज जीरो) अतः हमें तात्पर्य समझना चाहिए (What is the reference) यह सब देखकर वहाँ के राष्ट्रपति ने चौदह दिन बाद उन्हें अपने घर पर भोजन के लिए बुलाया।

मनुष्य का जीवन भी ऐसा ही है, यदि हमारा हाथ कट जाए या पैर कट जाए तो हम जीवित रह सकते हैं, किन्तु हमारा सर कट जाए तो हम जीवित नहीं रह सकते। एक क्षण पहले जैसा था, अगले क्षण नहीं है, हर समय बदल रहा है। मनुष्य का मूल उसका मस्तिष्क ही है।

इस अध्याय में पीपल के वृक्ष का अर्थ बहुत बड़ी शाखा वाला वृक्ष है। जब हवा नहीं चलती तो वृक्षों के पत्ते नहीं हिलते किन्तु पीपल के वृक्ष के पत्ते हिलते हैं। यह संसार हर क्षण बदल रहा है यह बिल्कुल सत्य है, परन्तु यह नष्ट नहीं होता।

क्या आप एक कागज को नष्ट कर सकते हैं? इसको फाड़ने पर उसका स्वरूप नष्ट होगा लेकिन यह रहेगा, पानी में गला देंगे तो उसकी लुगदी बच जाएगी। जला देंगे तो कार्बन के रूप में वह रहेगा। अतः स्वरूप बदलता है, नष्ट नहीं होता।

कितनी भी जनसँख्या बढ़ जाए या सुनामी आ जाए लेकिन पृथ्वी का वज़न एक ग्राम भी बढ़ता या घटता नहीं है। उसका स्वरूप बदलता है।

ज्ञानी के लक्षण क्या हैं? मैंने सब कुछ जान लिया ऐसा कोई कह सकता है क्या? उससे मैं कितना अधिक नहीं जानता हूँ, इसका एहसास मुझे होना चाहिए। जो ज्ञानी होता है वह हमेशा यही कहता है कि मुझे कुछ भी नहीं पता।

ज्ञान अनन्त है, कोई भी इसे पूरा प्राप्त नहीं कर सकता।

15.2

अधश्चोर्ध्वं(म्) प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।।2।।

उस संसार वृक्ष की गुणों (सत्त्व, रज और तम) के द्वारा बढ़ी हुई (तथा) विषय रूप कोंपलों वाली शाखाएँ नीचे, (मध्य में) और ऊपर (सब जगह) फैली हुई हैं। मनुष्यलोक में कर्मों के अनुसार बाँधने वाले मूल (भी) नीचे और (ऊपर) (सभी लोकों में) व्याप्त हो रहे हैं।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि यहाँ जो वृक्ष है, उसकी शाखाएँ चारों तरफ फैली हुई हैं। उसके मूल में श्रीभगवान् हैं, इसके तने में ब्रह्माजी हैं और इसकी वासना और ममता रूपी जड़ें अलग-अलग योनियों में फैली हुई है। यह अश्वत्थ वृक्ष है।

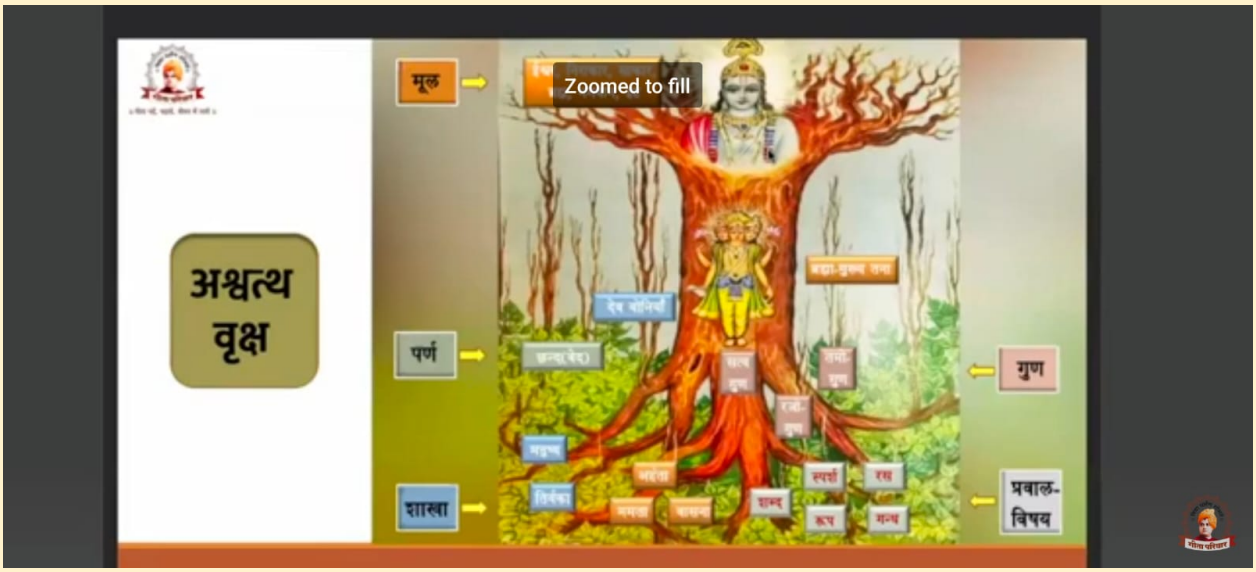

श्रीभगवान् कहते हैं की मूल में निराकार परमात्मा जो किसी भी रूप में हो सकते हैं कृष्ण रूप में, राम रूप में, विष्णु रूप में, ब्रह्म रूप में हो सकते हैं।

तना - तीन प्रकार की योनि हैं- देव, मनुष्य, त्रियक।
ज्ञान इसके पत्ते हैं जो चारों तरफ फैले हुए हैं।

इस वृक्ष की **जड़** में निराकार श्रीभगवान् हैं जो सर्वशक्तिमान हैं। वह इसका मूल है। भगवान् ब्रह्माजी इसके तने हैं, ज्ञान इसके पत्ते हैं। तीन प्रकार की योनियाँ हैं - एक मध्य में है और एक नीचे है, शाखाएँ इसकी योनियाँ है।

सत्त्व, रज, तम,
तीन तत्त्व हैं जिनसे सारे संसार की रचना होती है।
शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध
ये पाँच विषय हैं। इन विषयों से ममता, वासना का निर्माण होता है कि मुझे यह चाहिए। इसमें मनुष्य कर्मों के बन्धन में बँधता है। अच्छे कर्म करता है तो दैवीय योनि में जाता है। बुरे कर्म करता है तो राक्षस योनि में और अच्छे-बुरे दोनों कर्म करता है तो मनुष्य की योनि में आ जाता है और घूमता रहता है।

इसी से नदियाँ, पहाड़, पर्वत और पूरी दुनिया बनी है। तीनों गुणों के कारण सारे लोग अलग-अलग दिखते हैं और उनके स्वभाव अलग-अलग दिखते हैं।

ईश्वर से ब्रह्मा और सृष्टि का विस्तार, जलचर, नभचर जीव एवं उससे पाँच तत्त्वों का निर्माण होता है। जब शरीर का अन्तिम संस्कार किया जाता है अग्नि, अग्नि तत्त्व में मिल जाती है, जल, जल तत्त्व में मिल जाता है और जो राख बचती है वह पृथ्वी तत्त्व

है।

पञ्चभूत से शरीर बनता है। प्रकाश तत्त्व के कारण हम एक दूसरे को देख पाते हैं। दो, चार, आठ पैरों वाले, वनस्पति, कीटाणु, वायरस इन सब से मिलकर अलग-अलग योनियों में जन्म लेते हैं।

15.3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते, नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं(म्) सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा।।3।।

इस संसार वृक्ष का (जैसा) रूप (देखने में आता है), वैसा यहाँ (विचार करने पर) मिलता नहीं; (क्योंकि इसका) न तो आदि है, न अन्त है और न स्थिति ही है। इसलिये इस दृढ़ मूलों वाले संसार रूप अश्वत्थ वृक्ष को दृढ़ असङ्गता रूप शस्त्र के द्वारा काटकर –

विवेचन- इस संसार का स्वरूप, जैसा कहा है वैसा नहीं है, उसका आदि और अन्त है लेकिन मेरा जो ब्रह्माण्ड है उसका न प्रारम्भ है, न अन्त है।

शुकदेव मुनि भगवान् वेदव्यास जी के पुत्र थे। शुकदेव मुनि बहुत बड़े वैरागी थे। वे हिमालय के अलावा कहीं नहीं गए, किन्तु उनके मन में अहङ्कार आ गया। जब वे कुछ प्रश्न लेकर वेदव्यास जी के पास पहुँचे तो उन्होंने कहा कि यदि तुम्हें इसका उत्तर चाहिए तो तुम्हें राजा जनक के पास जाना होगा। वे बोले, राजा जनक तो क्षत्रिय हैं, वे तो गृहस्थ है, वे मुझ संन्यासी को कैसे ज्ञान दे सकते हैं?

वेदव्यास जी के कहने पर वे वहाँ गए। कई दिनों का मार्ग तय करके मिथिला नगरी पहुँचे। उस वंश में जो भी पैदा हुए, वे जनक कहलाए। वहाँ पहुँचकर बोले, जाओ द्वारपाल, अपने महाराज को सन्देश दो कि तत्त्ववेत्ता वेदव्यास जी के अति प्रिय शिष्य, ब्रह्मचारी, अनन्त ज्ञानी, महात्मा, महावृत्ति, शास्त्रज्ञ, तपस्वी, कुलश्रेष्ठ, शुकदेव महामुनि उनको मिलने के लिए आए हैं। द्वारपाल को इस तरह की परिचय देना सम्भव नहीं था, फिर भी उन्होंने अन्दर जाकर परिचय दिया कि एक तेजस्वी पुरुष आपसे मिलने आए हैं। सन्त और ज्ञानी हैं। द्वारपाल को लगा कि अब तो जनक जी उठकर भागेंगे, क्योंकि जब भी कोई साधु-सन्त आते थे तो जनक जी दौड़ कर जाते थे। जनक जी ने कहा, उन्हें कहें कि प्रतीक्षा करें, मैं व्यस्त हूँ, समय होने पर मिलूँगा।

शुकदेव मुनि को क्रोध आ गया कि यह राजा मुझे प्रतीक्षा करने को कह रहा है, लेकिन पिताजी ने कहा है तो प्रतीक्षा तो करनी पड़ेगी, वे खड़े रहे। द्वारपाल ने कहा कि बैठ जाइए? बोले, मैं ऐसे नहीं बैठता। रात को दूसरा द्वारपाल आया। उनके मन में आया कि शायद सुबह वाले द्वारपाल ने सही से परिचय नहीं दिया। उससे कह, तुम मेरा सन्देश लेकर जाओ। उन्होंने पहले वाला ही परिचय दिया। द्वारपाल ने जाकर फिर कहा, जनकजी बोले, उन्हें बोलो कि अभी प्रतीक्षा करें।

वे फिर भी खड़े रहे, पहले द्वारपाल से पूछा- अभी तक नहीं बुलाया। उन्होंने परिचय थोड़ा कम करके दिया। द्वारपाल ने कहा कि महाराज ने प्रतीक्षा करने को कहा।

छः दिन तक न वे बैठे, न कुछ खाया। इतने तपस्वी योगी शुकदेव मुनि जनक जी के द्वार पर खड़े रहे। देवमुनि को ध्यान में आया कि मै कुछ सीखने आया हूँ, इसलिए मुझे अपना परिचय छोटा करके देना चाहिए।उन्होंने सातवें दिन द्वारपाल से कहा कि मुझसे भूल हुई, राजा से कहना, समर्पित, ज्ञानाकाँक्षी, शिष्य रूप में शुकदेव मुनि आपके पास आये हैं।

जनकजी दौड़ कर गए। इत्र, फूलों से उनका स्वागत किया। उनको बैठने के लिये आसान दिया और उनके पैर धोये। शुकदेव मुनि आश्चर्य करते हैं कि सात दिनों तक मुझको खड़ा रखा और अब ऐसे स्वागत कर रहे हैं जैसे मुझसे बड़ा इनका कोई भक्त नहीं है।

जनक महाराज शुकदेव मुनि को बोले कि अब आप थोड़ा आराम कर लीजिए। आराम करने के बाद शुकदेवजी ने उनसे कहा

कि मैं कुछ पूछूँ, तो जनक जी ने कहा, अरे आज आप बहुत अच्छे दिन आए हैं, आज मिथिला का वार्षिक उत्सव है। आज हमारे यहाँ काली माता की पूजा होती है। जिसमें किसी ब्रह्मचारी के द्वारा नगर प्रदक्षिणा की जाती है। इसमें तेल के बर्तन को अपने सर के ऊपर रखकर, नगर में घूमना होता है और इस तेल से देवी का अभिषेक किया जाता है, लेकिन वह तेल गिरना नहीं चाहिए। श्रीभगवान् ने आपको इसके लिए चुना है।

शुकदेव मुनि ने पन्द्रह किलो तेल अपने सर पर रखकर नगर भ्रमण प्रारम्भ किया, उनके आस-पास सैनिक थे। जब वे काली माता के पास पहुँचे तो जनक जी ने ऋषि से कहा, बधाई हो! आपने प्रदक्षिणा कर ली है। आपको मिथिला नगर कैसा लगा? लोग उनका सम्मान कर रहे थे। पुष्प वर्षा कर रहे थे।

शुकदेव मुनि कहते हैं कि मैंने कुछ भी नहीं देखा। मेरा ध्यान तो सिर्फ तेल पर था कि तेल गिरना नहीं चाहिए। राजा जनक ने कहा कि आपकी पहली शिक्षा पूर्ण हुई। आपको याद नहीं है कि आसपास क्या हो रहा था? आपका ध्यान सिर्फ लक्ष्य पर केन्द्रित था।

जग मे रहो तो ऐसे रहो,
जैसे जल में कमल का फूल रहे।

आपको विषयों से वैराग्य करना होगा और मन को श्रीभगवान् में लगा कर रखो।

जब एक युवक-युवती का विवाह होता है तो कन्या के मन में और युवक के मन में एक दूसरे का ही चिन्तन रहता है। वधु घर का सारा काम तो कर रही है पर उसका का मन अपने पति में लगा है। ऐसे ही हमारा मन भी श्रीभगवान् में लगा होना चाहिए।

15.4

ततः(फ्) पदं(न्) तत्परिमार्गितव्यं(यँ) यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं(म्) पुरुषं(म्) प्रपद्ये यतः(फ्) प्रवृत्तिः(फ्) प्रसृता पुराणी॥15.4॥

उसके बाद उस परमपद (परमात्मा) की खोज करनी चाहिये जिसको प्राप्त होने पर मनुष्य फिर लौटकर संसार में नहीं आते और जिससे अनादिकाल से चली आने वाली (यह) सृष्टि विस्तार को प्राप्त हुई है, उस आदिपुरुष परमात्मा के ही मैं शरण हूँ।

विवेचन- आदिनारायण श्रीभगवान् में मन को लगाना चाहिए। विषय को वैराग्य से काटने के बाद भी फँसना बन्द नहीं होता।

जलेबी की कामना मन में नहीं आएगी ऐसा सम्भव नहीं है। यह बार-बार आती रहती है। हम सब पूरे जीवन भर एक जगह से मन को हटाते हैं तो दूसरी जगह फँस जाता है। हमारा मन फँसता ही रहता है।

श्रीभगवान् कहते हैं कि हजारों लाखों में कोई एक होता है जो इन सारे विषयों से मन को काटना सीख जाता है और जिसका कट जाता है उसकी स्थिति अलग ही होती है।

15.5

निर्मानमोहा जितसङ्गःदोषा, अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः(स्) सुखदुःखसञ्ज्ञैः(र्), गच्छन्त्यमूढाः(फ्) पदमव्ययं(न्) तत्।।5।।

जो मान और मोह से रहित हो गये हैं, जिन्होंने आसक्ति से होने वाले दोषों को जीत लिया है, जो नित्य-निरन्तर परमात्मा में ही लगे हुए हैं, जो (अपनी दृष्टि से) सम्पूर्ण कामनाओं से रहित हो गये हैं, जो सुख-दुःख नाम वाले द्वन्द्वों से मुक्त हो गये हैं, (ऐसे) (ऊँची स्थिति वाले) मोह रहित साधक भक्त उस अविनाशी परमपद (परमात्मा) को प्राप्त होते हैं।

विवेचन- हे अर्जुन! उस साधक की मन की स्थिति समान है। उसको न मोह है, न मान है, न अपमान है, न मैं कुछ तेरा न कुछ मेरा, न सुख न दुःख।

हमारे किसी भी शास्त्र में, जलेबी मत खाओ, मिठाई मत खाओ, ऐसा नहीं कहा है लेकिन उसमें मन को मत फँसाओ। जलेबी को बार-बार याद मत करो। सालों बाद भी उस जलेबी की याद बनी रहती है। फँसाने वाली जलेबी नहीं है, परन्तु मन उस (वासना) जलेबी में फँसा रहता है। श्रीभगवान् ने पदार्थ का त्याग करने को नहीं कहा, लेकिन उसमें जो आसक्ति है, उसका त्याग करने को कहा है। समस्या न व्यक्ति में है न परिस्थिति में। हमारी कामना क्या है? वासना क्या है? उसका त्याग करने को कहा है। कोई वस्तु स्वरूप से तो समाप्त हो गई, लेकिन मन में, कल्पना में बनी रहती हैं। इसी कारण वह हमें फँसाती है।

मैं नहीं, मेरा नहीं यह सब किसी का है दिया।
जो भी अपने पास है वह सब किसी का है दिया।।

जो इन वासनाओं से निकल गया वह सुख-दुख सब में समान हो जाता है, वही अविनाशी परम पद को प्राप्त करता है।

हरिनाम शरणम् कीर्तन के साथ आज का विवेचन सत्र का समापन हुआ।

प्रश्नोत्तरी सत्र

प्रश्नकर्ता- अविरामी रमेश दीदी
प्रश्न- हम कैसे अपनी चीजों पर मोह न रखें और उनसे कैसे अलग रहें?
उत्तर- जब हम छोटे थे तो हमें खिलौनों में मोह लगता था। बड़े होने पर आपका वह मोह अपने आप छूटा या छोड़ना पड़ा? किसी समय में हम किसी एक खिलौने पर जान देते थे, परन्तु आज उस खिलौने की तरफ देखते भी नहीं है, क्योंकि हमें कुछ बड़ा खिलौना मिल गया। अब हमें उसमें आनन्द आने लगा। इसी प्रकार जब श्रीभगवान् में मन लगने लगता है तो संसार से मन छूट जाता है। जब हम मन को श्रीभगवान् में लगाएँगे तो संसार की चीजों से मोह अपने आप छूट जाता है।

वैसे हम छोड़ना चाहेंगे भी तो नहीं छूटेगा, इसके लिए हमें कुछ और पकड़ना पड़ेगा तो वह छूट जाएगा। ऊपर की रस्सी को पकड़ते हैं तो नीचे की रस्सी को छोड़ना पड़ता है। यदि श्रीभगवान् की रस्सी को हमने पकड़ लिया तो संसार की रस्सी अपने आप छूट जाएगी।

प्रश्नकर्ता- तृषा गुप्ता दीदी
प्रश्न- जब हम आपसे विवेचन में सुनते हैं तो हमें सारे श्लोकों का अर्थ समझ आ जाता है, परन्तु जब हम एक श्लोक पढ़ते हैं तो

हम उस श्लोक का अर्थ नहीं समझ पाते?
उत्तर- क्या आप रसायन शास्त्र की पुस्तक बिना किसी अध्यापक के पढ़ सकते हो? सामान्य विषयों की पुस्तक भी हम बिना गुरु के नहीं पढ़ पाते हैं तो श्रीमद्भगवद्गीता जो ब्रह्म ज्ञान है, उसे हम स्वयं से कैसे पढ़ पाएँगे? इसके लिए हमें गुरु की आवश्यकता ही पड़ेगी। बिना गुरु के हमें यह समझ नहीं आ सकती। सात सौ श्लोकों में श्रीभगवान् ने पूरा का पूरा, संसार का ज्ञान भर दिया है। इतनी छोटी सी पुस्तक में संसार का सारा ज्ञान, यह कोई साधारण बात नहीं है, उसे खोलकर समझने के लिए हमें एक गाइड की जरूरत होती है।

यह हमें किसी सन्त या महापुरुष के सान्निध्य में पढ़ना पड़ता है। हम इसे उनसे ही सुनकर या समझ कर आपको बता रहे हैं और सामान्य गीता को यदि हम समझना चाहते हैं तो यह मुश्किल होता है। किसी से सुनकर समझना बहुत सरल होता है। धीरे-धीरे जब पढ़ने और सुनने लगेंगे तब जाकर हमारी पात्रता का निर्माण होगा। बाद में यदि स्वयं से भी पुस्तक लेकर पढ़ेंगे तो हमें समझ आने लगेगा। सीधा समझना कठिन लगता है इसलिए विवेचन सुनकर हम इसे जल्दी से समझ सकते हैं।

प्रश्नकर्ता- तृषा गुप्ता दीदी
प्रश्न- यदि कुछ शब्द हमें समझ नहीं आ रहे हैं तो क्या यह सामान्य बात है?
उत्तर -हाँ, यह सामान्य बात है, परन्तु यदि आप हर बार विवेचन सुनेंगे तो आपको धीरे-धीरे समझ आने लगेगा। स्कूल में भी हम किसी विषय की कक्षा में एक दिन उपस्थित नहीं रहेंगे तो हमें अध्याय समझ नहीं आएगा। उसके लिए हमें रोज कक्षा में उपस्थिति लगानी पड़ेगी और बार-बार पढ़ना पड़ेगा। उसे अच्छे से समझना पड़ेगा, उनके सन्देह दूर (डाउट्स क्लियर) करने पड़ते हैं तब जाकर हमें समझ आएगा।

प्रश्नकर्ता- गुरुधवन भैया
प्रश्न- हम लोग गृहस्थ आश्रम में रहने वाले हैं और उनके हर प्रकार के कामों में जूझते रहते हैं। यहाँ पर आपने यह प्रसङ्ग दिखाया कि "निर्माणमोहा जित्तसङ्ग दोषा",यह हमारे मन में कैसे आएगा? हम किस तरह अध्यात्म की ओर जा सकते हैं?
उत्तर- उसी की खोज में आप विवेचन सुनने तक पहुँचे हैं और यही मार्ग आपको अध्यात्म की तरफ ले जाएगा। जब हम एक टॉर्च लेकर चलते हैं तो उसका रेंज तीन फीट तक का होता है परन्तु उससे हम, जहाँ हमें जाना है उसका अभिदृश्य नहीं देख सकते हैं। इसी को लेकर अगर हम आगे चलते जाएँगे तो कई किलोमीटर तक का रास्ता हमें दिख जाएगा। आगे चलकर हम अपनी मञ्जिल तक पहुँच जाएँगे, इसलिए यह सोचकर कि आज ही मुझे सब पता चल जाएगा और मैं यह सब कर लूँगा, ऐसा सम्भव नहीं है? हमें उसी रास्ते पर चलते रहना पड़ेगा तभी हम गन्तव्य तक पहुँच पाएँगे।

यदि हम गीता पढ़ रहे हैं और सुन रहे हैं तो श्रीभगवान् धीरे-धीरे हमारे मन को साफ कर रहे हैं, हमारे अन्तरङ्ग को साफ करते जा रहे हैं। इसमें हमें भी ध्यान देना होगा कि मैं कहाँ पर अपना मन शुद्ध करने में फँस रहा हूँ। मेरे अन्दर कहाँ-कहाँ, क्या वासनाएँ हैं। कहाँ असत्य बोलता हूँ, कहाँ छल करता हूँ। यह हमें स्वयं को देखना पड़ेगा और उसका सुधार करना पड़ेगा। इसके लिए हमें जागृत रहना पड़ेगा और गीता माता की कृपा से यह सब सम्भव हो जाएगा। श्रीभगवान् ने हमें कर्म का अधिकार दिया है तो हमें करना ही पड़ेगा। धीरे-धीरे हमें अपने दैवीय गुणों में वृद्धि करनी पड़ेगी और तामसिक गुणों को खत्म करना पड़ेगा। यह प्रयास हमें स्वयं करना होगा।

प्रश्नकर्ता- मीता दीदी
प्रश्न- मुझे श्लोक याद नहीं हो पा रहे हैं तो आपने कहा था कि आप अच्छे से करोगे तो आपको याद जरूर होंगे? अभी मुझे बारहवाँ अध्याय याद हो गया है और पन्द्रहवाँ अध्याय भी आधा याद हो गया है।
उत्तर- प्रयास करने से आपका बारहवाँ अध्याय याद हो गया है न! पहले आपको लगता था कि मैं यह नहीं कर पाऊँगी।

प्रश्नकर्ता - मीता दीदी
प्रश्न- भगवद् प्राप्ति के लिए और क्या-क्या करना पड़ेगा?
उत्तर- भगवद् प्राप्ति के लिए कुछ पढ़ना नहीं पड़ता है। उसके लिए, उसको समझना पड़ेगा। गीताजी और सहस्रनाम, ये सब साबुन की तरह हैं। जिस प्रकार आप रोज-रोज साबुन लगाओगे तो कपड़ा साफ हो जाएगा। इसी प्रकार मन को साफ करने के लिए गीताजी और सहस्त्रनाम रोज पढ़ोगे तो यह मैल भी साफ हो जाएगी। उसके लिए हमें ब्रश का भी प्रयोग करना पड़ेगा। यह

ब्रश है, हमारी वासनाओं को कामनाओं को रोकना कि हम इसमें कहाँ फँसे हैं उसे ठीक करना होगा।

हमें ये सब प्रयास करने पड़ेंगे और विवेचन सुनकर धीरे-धीरे अपने मन का मैल साफ करना है कि इस बार मैंने यह सुना है तो मुझे इसको अपने जीवन में ढालना है। हम सब कुछ एकदम नहीं कर सकते हैं, परन्तु हर बार एक चीज हम अपने पर प्रयोग करें तो ये सब कर सकते हैं।

प्रश्नकर्ता अनीता दीदी
प्रश्न- एक बार हम गुरुजी के आश्रम में गए थे तो उन्होंने प्रसन्न होकर हमें शिवलिङ्ग दिया था और इस बार हमें ओंकारेश्वर से भी शिवलिङ्ग प्राप्त हो गया। हम उन दोनों का क्या करें? क्योंकि वह पूजा में से दिए थे?
उत्तर- आपको उनसे दोबारा से नहीं लेना चाहिए था क्योंकि आपके पास पहले ही है, परन्तु आपको वह प्रसाद के रूप में मिला है तो अभी आप उन दोनों की पूजा करते रहें फिर जब कोई योग्य व्यक्ति मिलेगा, जिसको उनकी जरूरत हो आप उन्हें दे सकते हो।

प्रश्नकर्ता- अनीता दीदी
प्रश्न- क्या मैं उन्हें अपने बहू बेटे को दे सकती हूँ?
उत्तर- हाँ जी, आप उन्हें दे सकते हो, जो भी उनकी सेवा अच्छे से कर सकता है आप किसी को भी दे सकते हो।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||